Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
July to September 2025, E-Journal, Vol. I, Issue LI (51), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

# बिलासपुर अंचल में शैव मत : एक ऐतिहासिक-सांस्कृतिक अध्ययन

**रमेश बाबू गुप्ता***

* एम. ए. (इतिहास) सी. व्ही. रमन विश्वविद्यालय, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

**शोध सारांश –** छत्तीसगढ़ के बिलासपुर अंचल में शैव मत की उपस्थिति अत्यंत प्राचीन, सुदृढ़ एवं निरंतर रही है। रतनपुर के कलचुरि शासकों, जिन्होंने लगभग नौ शताब्दियों तक इस अंचल पर शासन किया, ने शैव धर्म को विशेष राजाश्रय प्रदान किया, जिसके फलस्वरूप बिलासपुर जिले में रत्नेश्वर महादेव (रतनपुर), पातालेश्वर-केदारेश्वर महादेव (मल्हार), बांकेश्वर (तुमान), तथा गनियारी एवं किरारी गोढ़ी के शिव मंदिरों सहित अनेक शैव स्थलों का निर्माण हुआ। यह परंपरा कलचुरि-युग तक सीमित न रहकर, 18वीं शताब्दी के मराठा-कालीन कपिसदा शिव मंदिर जैसे उदाहरणों के माध्यम से आधुनिक काल तक निरंतरता में बनी रही।

**प्रस्तावना –** शैव मत, भारतीय धार्मिक परंपरा की उन प्राचीनतम एवं व्यापक उपासना-पद्धतियों में से एक है, जिसमें भगवान शिव को सृष्टि, स्थिति तथा संहार के परम कारण-तत्व के रूप में पूजा जाता है। छत्तीसगढ़ अंचल, जो प्राचीन काल में दक्षिण कोसल के नाम से जाना जाता था, में शैव मत का प्रसार अत्यंत प्राचीन काल से रहा है, किंतु इसे सर्वाधिक सुदृढ़रूप रतनपुर के कलचुरि शासकों के संरक्षण में प्राप्त हुआ।

प्राचीन काल में रतनपुर बिलासपुर जिला, का ऐतिहासिक केंद्र रहा है, आज भी अपने भीतर शैव मत की इस समृद्ध विरासत को अनेक प्राचीन एवं मध्यकालीन शिव मंदिरों के रूप में संजोए हुए है। यह शोध पत्र इसी शैव-परंपरा का समग्र, कालानुक्रमिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास करता है।

**शैव मत: एक संक्षिप्त सैद्धांतिक परिचय –** शैव मत भारतीय सनातन परंपरा की उन प्रमुख धाराओं में से एक है, जिसमें शिव को सृष्टि के आदि-कारण, योगेश्वर तथा संहारक-संरक्षक दोनों रूपों में पूजा जाता है। शिवलिंग, शैव उपासना का केंद्रीय प्रतीक है, जिसे निराकार एवं साकार, दोनों रूपों के समन्वय का प्रतीक माना जाता है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में शैव मत ने समय के साथ अनेक क्षेत्रीय रूप धारण किए, दक्षिण भारत में तमिल शैव-सिद्धांत, कश्मीर में प्रत्यभिज्ञा-दर्शन आधारित कश्मीर शैवमत, तथा मध्य भारत में पाशुपत एवं कालमुख जैसी शैव उप-परंपराएँ। छत्तीसगढ़ अंचल में शैव मत का स्वरूप मुख्यत: राजाश्रय-प्राप्त, मंदिर-केंद्रित तथा लोक-आस्था से गहराई से जुड़ा हुआ रहा है।

**कलचुरि राजवंश एवं शैव धर्म का राजाश्रय –** छत्तीसगढ़ के राजनीतिक इतिहास का प्रारंभ कलचुरि राजवंश की स्थापना से माना जाता है, जिन्होंने लगभग 875 ईस्वी से 1741 ईस्वी तक, अर्थात लगभग नौ शताब्दियों तक, इस अंचल पर शासन किया। कलचुरि शासक स्वयं को हैहयवंशी क्षत्रिय मानते थे, तथा इनका मूल राजवंश (महिष्मती-त्रिपुरी शाखा) प्राचीन काल से ही शैव मत का प्रबल अनुयायी रहा है, इस राजवंश के प्रारंभिक शासकों (कृष्णराज, शंकरगण आदि) को उनके अभिलेखों एवं मुद्राओं में स्पष्ट रूप से 'परम माहेश्वर', (अर्थात शिव का परम भक्त) की उपाधि से संबोधित किया गया है। यह उपाधि-परंपरा इस बात का प्रमाण है कि कलचुरि राजवंश की सांस्कृतिक पहचान का मूल आधार ही शैव धर्म के प्रति उनकी गहन आस्था थी।

रतनपुर के कलचुरि शासकों ने भी इसी वंश-परंपरा का अनुसरण करते हुए शैव धर्म को विशेष राजकीय संरक्षण प्रदान किया। ऐतिहासिक विवरणों के अनुसार, कलचुरि शासन-व्यवस्था में छत्तीसगढ़ 36 'गढ़ों' में विभक्त था, तथा प्रशासनिक ढांचे के साथ-साथ धार्मिक संस्थानों के निर्माण एवं संरक्षण पर भी विशेष बल दिया जाता था। इसी नीति के अंतर्गत कलचुरि शासकों ने छत्तीसगढ़ में अनेक शिव एवं विष्णु मंदिरों का निर्माण करवाया यद्यपि दोनों संप्रदायों को संरक्षण मिला, तथापि शिव-उपासना को स्पष्ट रूप से प्रमुखता प्राप्त थी, जैसा कि बिलासपुर अंचल में शिव-मंदिरों की तुलनात्मक रूप से अधिक संख्या से भी परिलक्षित होता है।

**बिलासपुर अंचल के प्रमुख शैव मंदिर**

**रत्नेश्वर महादेव मंदिर, रतनपुर-**रतनपुर, जो कलचुरि शासक रत्नदेव प्रथम द्वारा लगभग 1050 ईस्वी में बसाई गई राजधानी थी, में स्थित रत्नेश्वर महादेव मंदिर इस अंचल के सबसे महत्वपूर्ण शैव स्थलों में गिना जाता है। रतनपुर, जो अपने महामाया शक्तिपीठ के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध है, में रत्नेश्वर महादेव मंदिर की उपस्थिति यह दर्शाती है कि कलचुरि राजधानी में शाक्त एवं शैव दोनों उपासना-परंपराएँ एक साथ, राजकीय संरक्षण में, फलती-फूलती रहीं।

**पातालेश्वर महादेव मंदिर, मल्हार-**बिलासपुर शहर से लगभग 32 किलोमीटर दूर स्थित ऐतिहासिक नगर मल्हार में स्थित पातालेश्वर मंदिर, बिलासपुर अंचल के सर्वाधिक विशिष्ट शैव स्थलों में से एक है। यह मंदिर कलचुरि काल में, लगभग 10वीं से 13वीं शताब्दी के मध्य, सोमराज नामक एक ब्राह्मण द्वारा निर्मित करवाया गया था। इस मंदिर की सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि यहाँ शिवलिंग भू-गर्भ (जमीन के नीचे) में स्थापित है, तथा इसमें 108 कोण बने हुए हैं काले चमकीले पत्थर से निर्मित

यह गौमुखी आकृति का शिवलिंग है। लोक-मान्यता के अनुसार, यहाँ जलहरी में चढ़ाया गया जल सीधे पाताल-लोक तक पहुँचता है, जिसके कारण इसे 'पातालेश्वर' नाम प्राप्त हुआ। महाशिवरात्रि के अवसर पर यहाँ 15 दिनों तक चलने वाला एक भव्य मेला आयोजित होता है, जिसमें हजारों श्रद्धालु सम्मिलित होते हैं।

**बांकेश्वर मंदिर, तुमान-**बिलासपुर अंचल के तुमान नामक स्थल पर स्थित बांकेश्वर मंदिर भी कलचुरि-कालीन शैव स्थापत्य का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है, जो क्षेत्र में शैव मत की व्यापकता की पुष्टि करता है।

**गनियारी का शिव मंदिर-**बिलासपुर से लगभग 20-21 किलोमीटर दूर, कोटा मार्ग पर देवर तालाब के तट पर स्थित गनियारी का शिव मंदिर, छत्तीसगढ़ शासन द्वारा राज्य-संरक्षित स्मारक घोषित एक अन्य महत्वपूर्ण शैव स्थल है। यह मंदिर भी कलचुरि काल (लगभग 11वीं-12वीं शताब्दी) का माना जाता है, तथा इसकी द्वारशाखा पर शिव-परिवार एवं नदी-देवियों का शिल्पांकन तथा गर्भगृह में जलाधारी-सहित शिवलिंग स्थापित है। इस मंदिर से एक दुर्लभ सरस्वती प्रतिमा भी प्राप्त हुई है, जो इसकी शैव-सरस्वत सहअस्तित्व की परंपरा को भी इंगित करती है।

**किरारी गोढ़ी का प्राचीन शिव मंदिर-**बिलासपुर जिले में स्थित किरारी गोढ़ी का शिव मंदिर, यद्यपि वर्तमान में अत्यंत जीर्ण अवस्था में है, जहाँ मंदिर के नाम पर अब केवल एक दीवार शेष बची है, तथापि यह राज्य-संरक्षित स्मारकों की सूची में सम्मिलित है, तथा गनियारी एवं मल्हार के मंदिरों के साथ समकालीन कलचुरिकालीन शैव-स्थापत्य परंपरा की एक कड़ी के रूप में महत्वपूर्ण है।

**कपिसदा का शिव मंदिर (18वीं शताब्दी)-**सारंगढ़-बिलाईगढ़ जिले के कपिसदा ग्राम में स्थित 18वीं शताब्दी का शिव मंदिर (जो स्थानीय परंपरा के अनुसार वहाँ के कृष्ण मंदिर के साथ-साथ स्थित है) यह प्रदर्शित करता है कि बिलासपुर-सारंगढ़ अंचल में शैव मत की परंपरा कलचुरि-युग तक सीमित न रहकर, मराठा-सत्ता-स्थापना (1741 ई.) के कालखंड में भी सक्रिय रूप से जारी रही। यह मंदिर शैव मत की इस अंचल में सतत ऐतिहासिक निरंतरता का एक महत्वपूर्ण, अपेक्षाकृत आधुनिक प्रमाण प्रस्तुत करता है।

**शैव-शाक्त-वैष्णव समन्वय, बिलासपुर अंचल का विशिष्ट स्वरूप-**
बिलासपुर अंचल के धार्मिक भू-दृश्य का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि यहाँ शैव मत कभी भी शाक्त अथवा वैष्णव परंपराओं से पृथक, प्रतिस्पर्धी संप्रदाय के रूप में नहीं रहा, अपितु इसने सदैव इन परंपराओं के साथ सहअस्तित्व एवं समन्वय बनाए रखा। इस समन्वय के अनेक स्पष्ट उदाहरण उपलब्ध हैं-

रतनपुर में महामाया शक्तिपीठ के साथ-साथ रत्नेश्वर महादेव मंदिर (शैव) का सहअस्तित्व।

गनियारी के शिव मंदिर (शैव) में ही सरस्वती प्रतिमा (शारदा-परंपरा) की उपस्थिति।

खमतराई की बगदाई वन देवी (शाक्त-ग्रामदेवी परंपरा) के मंदिर-परिसर में द्वादश ज्योतिर्लिंग (शैव) तथा राधा-कृष्ण दरबार (वैष्णव), तीनों का एक साथ समावेशन।

कपिसदा में कृष्ण मंदिर (वैष्णव) तथा शिव मंदिर (शैव) का एक ही ग्राम में सन्निकट सहअस्तित्व।

यह बहु-सांप्रदायिक समन्वय भारतीय हिंदू धर्म की उस व्यापक एवं समावेशी प्रकृति का प्रतिबिंब है, जिसमें विभिन्न उपासना-पद्धतियाँ परस्पर विरोधी न होकर, एक ही समग्र सनातन परंपरा की पूरक अभिव्यक्तियों के रूप में सहअस्तित्व में रहती हैं। बिलासपुर अंचल इस समन्वयवादी परंपरा का एक उत्कृष्ट एवं सुसंगत क्षेत्रीय उदाहरण प्रस्तुत करता है।

**शैव मंदिरों की स्थापत्य एवं विशेषताएँ-** बिलासपुर अंचल के शैव मंदिरों में कुछ सुसंगत स्थापत्य-प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती हैं। प्रथमत:, अधिकांश शिव मंदिर जल-स्रोतों (नदी, तालाब) के समीप निर्मित हैं जैसे गनियारी का मंदिर देवर तालाब के तट पर, तथा मल्हार एवं रतनपुर के मंदिर भी नदी-सामीप्य में स्थित हैं। द्वितीयत:, गर्भगृह में जलाधारी-सहित शिवलिंग की स्थापना, तथा प्राय: गणेश जी की सहवर्ती प्रतिमा की उपस्थिति, एक सामान्य पैटर्न के रूप में देखी जाती है। तृतीयत:, द्वारशाखा पर शिव-परिवार एवं नदी-देवियों (गंगा-यमुना) का अंकन, कलचुरिकालीन शैव मंदिरों की एक विशिष्ट पहचान है, जो गनियारी सहित अनेक मंदिरों में समान रूप से पाई जाती है।

मल्हार के पातालेश्वर मंदिर का भू-गर्भस्थ शिवलिंग तथा इसकी 108-कोणीय गौमुखी संरचना, क्षेत्रीय शैव प्रतिमा-विज्ञान में एक अद्वितीय एवं दुर्लभ उदाहरण प्रस्तुत करती है, जो सामान्य शिव मंदिरों की तुलना में एक विशिष्ट तांत्रिक अथवा योगिक प्रतीकात्मकता की ओर संकेत करती है।

**लोक-शैव परंपरा, शिवरात्रि एवं सामाजिक-सांस्कृतिक जीवंतता-**
बिलासपुर अंचल में शैव मत केवल एक ऐतिहासिक अथवा पुरातात्विक विषय न होकर, आज भी एक अत्यंत जीवंत एवं सक्रिय लोक-धार्मिक परंपरा है। महाशिवरात्रि के अवसर पर क्षेत्र के प्राय: सभी शिव मंदिरों (मल्हार, गनियारी, रतनपुर आदि) में विशेष पूजा-अर्चना तथा मेलों का आयोजन होता है मल्हार के पातालेश्वर मंदिर का 15-दिवसीय शिवरात्रि मेला इसका सर्वाधिक उल्लेखनीय उदाहरण है, जिसमें हजारों श्रद्धालु सम्मिलित होते हैं।

यह सतत सामाजिक-धार्मिक सक्रियता इस बात का प्रमाण है कि बिलासपुर अंचल में शैव मत, कलचुरि-कालीन राजाश्रय की समाप्ति के सदियों पश्चात् भी, स्थानीय समुदाय की धार्मिक चेतना में गहराई से रचा-बसा हुआ है, तथा यह परंपरा राजकीय संरक्षण के अभाव में भी जन-आस्था के बल पर आज तक अक्षुण्ण बनी हुई है।

बिलासपुर अंचल में शैव मत के ऐतिहासिक अध्ययन से एक महत्वपूर्ण प्रवृत्ति उभरकर सामने आती है, यह परंपरा किसी एक शासक अथवा एक कालखंड तक सीमित न रहकर, कलचुरि-युग (9वीं-18वीं शताब्दी) से मराठा-युग (18वीं शताब्दी के मध्य) तक, तथा वहाँ से वर्तमान समय तक, निरंतरता में बनी रही। कपिसदा के 18वीं शताब्दी के शिव मंदिर की उपस्थिति यह सिद्ध करती है कि सत्ता-परिवर्तन (कलचुरि से मराठा तक) के बावजूद, शैव मत के प्रति स्थानीय समाज एवं तत्कालीन संरक्षकों (चाहे वे राजा हों अथवा स्थानीय जमींदार) की आस्था एवं संरक्षण-भावना अक्षुण्ण बनी रही।

तथापि, यह भी रेखांकित किया जाना आवश्यक है कि बिलासपुर के अनेक ऐतिहासिक शैव मंदिर (जैसे किरारी गोढ़ी) आज उपेक्षा एवं क्षरण के कारण भग्नावस्था में पहुँच चुके हैं, जबकि अन्य (जैसे मल्हार का पातालेश्वर मंदिर) आज भी सुसंरक्षित एवं सामाजिक रूप से अत्यंत सक्रिय हैं। यह असमानता इस बात का संकेत है कि किसी मंदिर की 'जीवंतता' अथवा 'संरक्षण' मुख्यत: उसकी समकालीन लोक-आस्था एवं सामुदायिक

जुड़ाव पर निर्भर करती है, न कि केवल उसकी ऐतिहासिक प्राचीनता पर।

**निष्कर्ष–**बिलासपुर (छत्तीसगढ़) में शैव मत की परंपरा एक सुदीर्घ, सुसंगत तथा बहुआयामी ऐतिहासिक–सांस्कृतिक यात्रा प्रस्तुत करती है, जिसका आरंभ कलचुरि राजवंश के परम माहेश्वर राजाओं के राजाश्रय से हुआ, और जो रत्नेश्वर महादेव (रतनपुर), पातालेश्वर–केदारेश्वर (मल्हार), बांकेश्वर (तुमान), तथा गनियारी एवं किरारी गोढ़ी के मंदिरों के माध्यम से मूर्त रूप में आज भी विद्यमान है। कपिसदा के 18वीं शताब्दी के शिव मंदिर जैसे उदाहरण यह प्रदर्शित करते हैं कि यह परंपरा किसी एक राजवंश तक सीमित न रहकर, राजनीतिक सत्ता–परिवर्तनों से परे, निरंतर जीवंत बनी रही।

इसके साथ ही, बिलासपुर अंचल में शैव मत का सर्वाधिक विशिष्ट पहलू इसका शाक्त एवं वैष्णव परंपराओं के साथ सहज, समन्वयवादी सहअस्तित्व है, चाहे वह रतनपुर में महामाया–रत्नेश्वर का साथ हो, गनियारी में शिव–सरस्वती का संयोग हो, अथवा खमतराई की बगदाई वन देवी परिसर में शैव–शाक्त–वैष्णव तीनों परंपराओं का समावेश हो। यह समन्वयवादी चरित्र बिलासपुर के धार्मिक भू–दृश्य को भारतीय सनातन परंपरा की व्यापक समावेशिता का एक प्रतिनिधि एवं अध्ययन–योग्य क्षेत्रीय उदाहरण बनाता है। भविष्य में इन मंदिरों पर केंद्रित विस्तृत पुरातात्विक एवं प्रतिमा–विज्ञान संबंधी शोध, बिलासपुर की इस समृद्ध शैव विरासत को और अधिक स्पष्टता से उजागर कर सकेगा।

**संदर्भ ग्रंथ सूची :–**

1. कलचुरी काल 875–1741 कलचुरियों द्वारा शैव धर्म–संरक्षण, रत्नेश्वर महादेव–रतनपुर, बांकेश्वर–तुमान संबंधी विवरण।
2. पातालेश्वर/केदारेश्वर महादेव – मल्हार के पातालेश्वर मंदिर, सोमराज ब्राह्मण, 108 कोण शिवलिंग, शिवरात्रि मेला संबंधी विवरण।
3. कलचुरि शासकों की परम माहेश्वर उपाधि संबंधी विवरण।
4. वर्मा, डॉ. के. पी., शिव मंदिर, गनियारी, कला–वैभव, संयुक्तांक 13–14 (2003–04), इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़।
5. जिला प्रशासन, बिलासपुर, पुरातत्व विभाग, आधिकारिक जिला वेबसाइट (गनियारी एवं किरारी गोढ़ी के राज्य–संरक्षित शिव मंदिरों की सूची।
6. कौशलेश्वरी मंदिर–कोसिर, कलचुरि–मराठा कालीन शैव स्थापत्य संबंधी विवरण।

**********